National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040; Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 2; Issue 2; May 2017; Page No. 187-194

वाल्मीकिरामायण में प्रतिबिम्बित रक्षाव्यवस्था

सर्वज्ञभूषण

प्रवक्ता संस्कृत, रा०इ०का०बरगढ, चित्रकूट, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

आदिकाव्य रामायण महर्षि वाल्मीकि की रचना है जिसे आर्षकाव्य भी कहा जाता है। रामायण का उद्भव तमसा नदी के तट पर क्रौञ्ची पक्षी के विलाप को सुनकर उत्पन्न शोक महर्षि वाल्मीकि के द्वारा श्लोक रूप में परिणत हो गया। रामायण में श्रीराम के चरित का वर्णन प्रमुखरूप से किया गया है इसके अतिरिक्त भ्रातृप्रेम, राजनीतिक वर्णन, सामाजिक वर्णन तथा तत्कालीन रक्षाव्यवस्था भी रामायण में वर्णित है।

वाल्मीकिरामायण के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि प्रजा की सुरक्षा तथा समृद्धि के लिए अङ्गों से युक्त दृढ़ संस्था राज्य के रूप में विद्यमान थी। राजा, मन्त्री, जनता, दुर्ग, कोष, सेना, सहायक–राज्य के इन सात अङ्गों का उल्लेख वाल्मीकिरामायण में वर्णित है। राजा ही राज्य का सर्वोच्च अधिकारी होता था जो क्षत्रिय होता था यह व्यवस्था आर्य राज्यों में प्रचलित थी। राज्य संस्था का मूल उद्देश्य प्रजा का कल्याण सम्पादन था। राजा की शिक्षा में धार्मिक शिक्षा का अनिवार्य समावेश था। राजा प्रजानुरञ्जन में तत्पर रहता था तथा बाहरी विपत्तियों से प्रजा की रक्षा करता था और राज्य के भीतर प्रजा की समृद्ध कारक नीतियों के प्रवर्तन में सर्वदा यत्नशील रहता था ऐसा उल्लेख वाल्मीकिरामायण में प्राप्त होता है। प्राचीन भारत में अनेक स्वतन्त्र और अर्धस्वतन्त्र राज्यों का अस्तित्व था। वे अपनी सीमा बढ़ाने के लिए अन्य राज्यों पर आक्रमण करने को तत्पर रहते थे। उन परिस्थितियों में किसी राजा को अन्य राज्यों की भीतरी जानकारी प्राप्त करने के लिए दूतों तथा चरों का उपयोग करना पड़ता था इसप्रकार दूत तथा चर प्राचीन भारतीय राजनैतिक व्यवस्था के महत्वपूर्ण अङ्ग बन गये थे।

राजा दूतों तथा चरों के माध्यम से आन्तरिक तथा बाह्य परिस्थितियों का सूक्ष्मता से आकलन करने में समर्थ होता था, वेदों में ऐसे कूटनीतिक दूतों की व्यवस्था का उल्लेख प्राप्त होता है। ऋग्वेद में वरुण के दूतों तथा चरों का विवरण प्राप्त होता है। तैत्तिरीय संहिता में दूत के लिए 'प्रहित' शब्द का प्रयोग भी प्राप्त होता है।

दूत तथा चर

वाल्मीकि ने दूत को राजा का नेत्र कहकर सम्बोधित किया है–

> **य**स्मात्पश्यन्ति दूरस्थान् सर्वानर्थान्नराधिपाः।
> चारेण तस्मादुच्यन्ते राजानो दीर्घचक्षुषः।[१]

बुद्धिमान् राजा चरों के द्वारा जो जानकारी एकत्र करता है बड़ी–बड़ी विपत्तियों से अपने को मुक्त कराने में समर्थ हो जाता है–

> चारेण विदितः शत्रुः पण्डितैर्वसुधाधिपैः।
> युद्धे स्वल्पेन यत्नेन समासाद्य निरस्यते।।[२]

रामायण में हनुमान्, अंगद, प्रहस्त, राजा के दूत के रूप चित्रित किए गये हैं –

> अंगदं बालितनयं समाहूयेदमब्रवीत् ।
> गत्वा सौम्य दशग्रीवं ब्रूहि मद्वचनात्कपे।।[३]

हनुमान् के कार्यों में दूत के उच्च आदर्श निहित दिखाई देते हैं किष्किन्धाकाण्ड में हनुमान् ने स्वयं को सुग्रीव का दूत बताया और राम के साथ सम्बन्ध स्थापित कराया। कभी–कभी गुप्तचर शत्रु राजा को मार डालने या उसके अधिकारियों को समाप्त करने के लिए भी अधिकृत होते थे –

> अप्रमादाच्च गन्तव्यं सर्वैरेव निशाचरैः।
> कर्तव्यश्च सदा यत्नो राघवस्य वधं प्रति।।[४]

सीताहरण के पश्चात् रावण ने राम की गतिविधियों का पता लगाने के लिए अपने आठ गुप्तचरों को नियुक्त किया था, लंका की घेराबन्दी के समय राम ने अपना गुप्तचर विभाग विभीषण को दे रखा था विभीषण अपने व्यक्तिगत सचिवों के द्वारा रावण की गतिविधियों का पूर्ण परिचय प्राप्त कर उसकी सूचना दी थी शुक, सारण, शार्दूल नामक रावण के गुप्तचरों को विभीषण ने ही पकड़ा जो राम के विषय में जानकारी प्राप्त करने आये थे–

> आचचक्षेऽथ रामाय गृहीत्वा शुकसारणौ।[५]
> विभीषणेन तत्रस्था निगृहीता यदृच्छया।।[६]

शत्रु की शक्ति और योजनाओं की सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए चरों को अपना वेश बदलकर घूमना पड़ता था। रावण के गुप्तचर राम की सेना में वानर का वेश धारण कर घूमते थे तथा विभीषण के गुप्तचर पक्षियों के रूप में रावण की गतिविधियों का पता लगाते थे।

सुन्दरकाण्ड में हनुमान् के दूत के रूप में अधिकाधिक प्रशंसनीय कार्यों के विवरण हैं यद्यपि हनुमान् पर सीता के अन्वेषण का भार सौंपा गया था परन्तु लंका में हनुमान् ने पूर्ण अधिकार सम्पन्न पुरुषों के अधिकारों का प्रयोग किया

> 'तद्यथा लभ्यते सीता तत् त्वमेवोपादय '[७]

राजधानियाँ दुर्गों से युक्त हुआ करती थीं ये दुर्ग प्राकृतिक तथा निर्मित दोनों प्रकार के होते थे। संस्कृत का पुर शब्द दृढ़ दुर्ग का ही अर्थ रखता है राज्य में दुर्गों की स्थिति से स्पष्ट होता है कि भारत में दुर्ग विधान राज्य के लिए अनिवार्य था । भारतीय सेनाशास्त्र, जो कि आक्रमण से अधिक रक्षा को महत्त्व देता है स्वाभाविक रूप से दुर्ग की आवश्कता को धन सहायक और सेना से भी अधिक महत्त्व का मानता था। वाल्मीकि भी दुर्ग को सर्वोच्च महत्त्व देते थे। उत्तरकाण्ड में कहा गया है कि रावण लंका के प्राकृतिक दुर्ग में स्थित होकर शत्रुओं के लिए अजेय व उन्हें विनष्ट करने में समर्थ था–

लंकादुर्गं समासाद्य राक्षसैर्बहुभिर्वृताः।
भविष्यथ दुराधर्षाः शत्रूणां शत्रुसूदनाः।[८]

कौसल की राजधानी अयोध्या का शाब्दिक अर्थ है जो शत्रुओं के लिए युद्ध करने के अयोग्य हो–

सत्यनाम्नां दृढद्वारां हस्त्यश्वरथसंकुलाम् ।
कच्चित्समुदितां स्फीतामयोध्यां परिरक्षति।।[९]

रक्षात्मक उपायों के आधार पर वाल्मीकि ने चार प्रकार के दुर्गों का उल्लेख किया है– नादेय दुर्ग, पर्वत दुर्ग, खनिज दुर्ग, अम्बु दुर्ग। जो चारों ओर नदी से घिरे हुए टापू पर स्थित होता था उसे नादेय दुर्ग, जो चारों ओर पर्वत श्रृंखलाओं से घिरा होता था उसे पार्वत दुर्ग,भूमि को खोदकर भूमि के भीतर बनाए गए दुर्ग को खनिज दुर्ग तथा चारों ओर से समुद्र के जल से घिरे हुए दुर्ग को अम्बुदुर्ग कहा जाता था–

''नादेयं पार्वतेयं च खनित्रान्चाम्बु वर्तते।''[१०]

अयोध्या आदि राजधानियों के दुर्ग समतल भूमि पर थे जहाँ कोई प्राकृतिक सुरक्षा नहीं थी अतः सुरक्षाएँ निर्मित की गई थी–

कपाटतोरणवतीं सुविभक्तान्तरापणाम् ।
सर्वयन्त्रायुधवतीमुपेतां सर्वशिल्पिभिः ।।
सूतमागधसंबाधां श्रीमतीमतुलप्रभाम् ।
उच्चाट्टालध्वजवतीं शतघ्नीशतसंकुलाम् ।
दुर्गगम्भीरपरिखां दुर्गामन्यैर्दुरासदाम्।
वाजिवारणसम्पूर्णां गोभिरुष्ट्रैः खरैस्तथा।[११]

रामायणकाल में राजधानियाँ योजनाबद्ध रूप से निर्मित थीं। जनता के आवास, मन्त्रियों के भवन, राजाओं के महल अपना महत्त्व रखते थे। रक्षाव्यवस्था के लिए नगरों के चारों ओर जल जन्तुओं से भरी खाइयाँ थी, नगर के चारों ओर मजबूत दीवारें होती थीं जो बुर्जों और ध्वजाओं से युक्त होती थीं। इन दीवारों पर बलपूर्वक नगर में प्रवेश करने वाले शत्रु पर प्रहार करने के लिऐ चट्टानें और विविध शस्त्र रखे जाते थे दरवाजों की दीवारों पर शस्त्रों से सज्जित सुरक्षा सैनिक विद्यमान रहा करते थे। दरवाजों पर शतघ्नी तथा यन्त्र रहते थे जिनके द्वारा पत्थर फेंके जाने पर सैकड़ो शत्रुओं का संहार हो सकता था द्वार पर सेना का पूर्ण सुसज्जित एक अधिकारी संरक्षण में अवस्थित रहता था। दीवार पर ऊँचे खम्भों से युक्त स्थान होते थे जिनसे दूर का निरीक्षण किया जा सकता था। इन स्थानों से शत्रु सेना का निरीक्षण और शस्त्रों की सुरक्षा की व्यवस्था की जाती थी। केन्द्र तथा उसके चारों ओर राजा, राजकुमार, सेनापति तथा अधिकारियों के नियन्त्रण में सेनाएँ सुसज्जित रहती थीं–

शस्त्रणां कवचानां च कृत्वा सम्यगुपार्जनम् ।
तेषां दास्यामहे युद्धं हनिष्यामश्च तान् मृधे।।[१२]

दुर्गों का निर्माण राज्य का अंग बन चुका था अतः दुर्गों की घेराबन्दी करके उनके अवरोध का भी प्रशिक्षण देना उस समय की सैनिक शिक्षा का महत्वपूर्ण अंग माना जाता था। अपने दुर्ग में बैठा हुआ सुरक्षित शत्रु आक्रामक राजा के लिए समस्या बन जाता था। विशेषकर उस स्थिति में जब विस्फोटक अस्त्रों का आविष्कार नहीं हुआ था। सीता को प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले राजाओं ने पूरे वर्ष तक मिथिला का घेराव किया था–

रोषेण महताविष्टाः पीडयन्मिथिलां पुरीम् ।'[१३]

सेना

अपनी प्रजा के प्राण और धन की सुरक्षा राजा के लिए परम आवश्यक कर्तव्य था इसके लिऐ उसे दण्ड का भी आश्रय लेना पड़ता था। सेना दण्ड का प्रधान साधन था उस समय की राजनैतिक परिस्थितियों में सेना का अत्यधिक महत्त्व था।

पदाति सैनिक और रथ सेना ये दोनों वैदिककाल में भी विद्यमान थे। रामायणकाल तक अश्वों का तथा गजों का भी समावेश सेना के अंग के रूप में हो चुका था। चतुरंग बल का रामायण में पर्याप्त उल्लेख है जिसमें पदाति, रथ, अश्व, गज सम्मिलित थे। आर्यों तथा राक्षसों में चतुरङ्गिणी सेना के अधिपतियों का उल्लेख है।

भरत की चित्रकूट यात्रा में सेना के सभी अंग उसके साथ थे। रामायण में सेना के इन अङ्गों का विवरण अनेक स्थलों पर भी उपलब्ध है–

चतुरङ्गसमायुक्तं मया सह च तं नय।[१४]
इयमक्षौहिणी पूर्णा सवाजिरथसंकुला।
हस्तिध्वजसमाकीर्णा तेनासौ बलवत्तरः।।[१५]

वाल्मीकि ने युद्धकाल में मन्त्र और कोष की अनिवार्य आवश्यकता को स्वीकार किया है गुप्तचरों को राजा का नेत्र कहा गया है–

यत्मात्पश्यन्ति दूरस्थान्सर्वानर्थान्नराधिपाः।
चारेण तस्मादुच्यन्ते राजानो दीर्घचक्षुषः।।[१६]

लंका के युद्ध में गुप्तचरों का महत्त्वपूर्ण योगदान वर्णित है। रसद विभाग भी सेना का महत्त्वपूर्ण अंग था। भरत की चित्रकूट यात्रा में रसद विभाग भी साथ था –

अथ भूमिप्रदेशज्ञाः सूत्रकर्मविशारदाः
स्वकर्माभिरताः शूराः खनका यन्त्रकास्तथा
कर्मान्तिकाः स्थपतयः पुरुषा यन्त्रकोविदाः
तथा वर्धकयश्चैव मार्गिणो वृक्षतक्षकाः
कूपकाराः सुधाकारा वंशकर्मकृतस्तथा
समर्था ये च दष्टारः पुरतस्ते प्रतस्थिते।।[१७]

सेना का प्रथम अङ्ग या मुख्य भाग पदाति सैनिक होते थे। सभी देश के समान भारत में भी पदाति सैनिक मौलिक योद्धा होते थे। वैदिककाल में भी पदाति सैनिकों की अपेक्षा रथसेना का कम महत्त्व था परन्तु रामायणकाल में पदाति सैनिकों का महत्त्व कम हो गया था, वे रथों के साथ चलने वाले तथा सेना की विशालता के द्योतक बनकर रह गए थे।

रामायण में पदाति सैनिकों का स्वतन्त्र महत्त्व वर्णित नहीं है। पदाति सेना का सेना की गणना में ही उपयोग मिलता है। कभी–कभी वे इस गणना से भी लुप्त दिखाई देते हैं रामायण में उन्हें 'शेषबल' तथा 'अवशिष्टबल' आदि शब्दों से स्मरण किया गया है–

जघान शेषं तेजस्वी ।[१८]
बलं तदाऽवशिष्टं तु नाशयामास वानरः।[१९]

वाल्मीकि ने पदाति सैनिकों तथा उसके नायक का विवरण दिया है–

'न शेकुः समवस्थातुं प्रहते वाहिनीपतौ'[२०]

पदातिसेना की शस्त्र सज्जा के विषय में भी रामायण में अल्प सूचनाएँ ही उपलब्ध हैं युद्ध के लिए उनके पास धनुष – बाण होते थे –

अगस्त्यवचनाच्चैव जग्राहैन्द्रं शरासनम् ।
खड्गं च परमप्रीतस्तूणीं चाक्षयसायकौ।।[२१]

गदा और परिघ भी उनके शस्त्र थे खड्ग तो उनका प्रधान शस्त्र था। ढाल का प्रयोग भी उस समय प्रचलन में था वानरों की विशाल सेना थी जो पदातियों की ही थी, अपने पास कोई बाहरी शस्त्र नहीं रखता थी, उनके शस्त्र तीक्ष्ण दाँत, नख और वृक्ष तथा पर्वतों की चट्टानें होती थी–

'शैल श्रृंगाणि शतशः प्रवृद्धांश्च महीरूहाः '[२२]

वानर सेना के योद्धाओं को छोड़कर रामायण के योद्धागण प्रमुख रूप से रथारूढ़ योद्धा ही थे। दशरथ, राम, रावण, इन्द्रजीत अक्ष, कुम्भकर्ण महारथी और अतिरथी थे। रथ के प्रयोग करने वाले योद्धागण स्वभावतः उच्च श्रेणी से सम्बद्ध थे। रथ सेना ही युद्ध में आशा का केन्द्र होती थी। रथारोहियों को राजा सम्मानपूर्वक विदा करता था–

आरुरोह रथं दिव्यं प्रहस्तं सज्जकल्पितम् ।
हयैर्महाजवैर्युक्तं सम्यक् सूतसुसंयुतम् ।।[२३]

सेना का संगठन
रामायणकाल में सेना का सुसज्जित रूप प्रकट होता है। भरत जब चित्रकूट में राम से मिलने जाते हैं तब अयोध्या की विशाल सेना उनके साथ थी। उसमें नौ हजार हाथी, साठ हजार रथ, एक लाख घुड़सवार थे–

अधिरुह्य हयैर्युक्तान् रथान् सूर्यरथोपमान् ।
नवनागरसहस्राणि कल्पितानि यथाविधि।।
अन्वयुर्भरतं यान्तमिक्ष्वाकुकुलनन्दनम् ।
षष्ठीरथसहस्राणि धन्विनौ विविधायुधाः।
शतं सहस्राण्यश्वानां समारूढानि राघव ।।[२४]

सेना के लिए भर्ती किए जाने वाले सैनिक परम्परागत, वेतनभोगी, सहायक राजाओं की ओर से प्रदत्त, पराजित शत्रु सेना के सैनिक तथा जंगल में घूमने वाले लोग हुआ करते थे–

भिन्नाटविबलं चैव मौलं भृत्यबलं तथा
सर्वमेतद् बलं ग्राह्यं वर्जयित्वा द्विषद्बलम् ।।[२५]

सेनाविभाग
व्यवस्था की सुविधा के लिए विशाल सेनाओं को अनेक भागों में विभक्त किया जाता था। सेना का सर्वोच्च अधिकारी राजा होता था उसके उपरान्त सेना के उच्चाधिकारी के लिए अनेक स्थानों पर अनेक सञ्ज्ञाएँ उपलब्ध हैं। सेनापति, वाहिनीपति, चमूपति, चमूमुख्य आदि हैं–

'अब्रवीद् हर्षणं नाम खरः सेनापतिस्तदा ।'[२६]
'अब्रवीद् राक्षसान् सर्वान् प्रहसन् वाहिनीपतिः'[२७]

आक्रमण के योग्य काल
रामायण में शत्रु पर आक्रमण का उचित समय हेमन्त ऋतु माना गया है यह समय अधिक शीत और अधिक ग्रीष्म से रहित माना गया है इस समय सेना दूर तक की यात्रा पूर्ण कर सकती थी, कृषि और जल की उस समय मार्ग में सुविधा होती थी–

प्राज्यकामा जनपदाः संपन्नतरगोरसा।
विचरन्ति महीपाला यात्रार्थं विजिगीषवा।।[२८]

युद्ध में प्रयुक्त होने वाले रथ
युद्ध में प्रयुक्त होने वाले रथ को 'सांग्रामिक रथ' कहा जाता था। वह अन्य रथों से भिन्न होता था रथ की निर्माणप्रक्रिया वैदिककाल से भिन्न नहीं थी।
रामायण में रथ के अंगों के संकेत प्राप्त होते हैं। जिनमें अक्ष, अनुकर्ष, अपस्कर, उपस्थ, कुबेर, चक्र, त्रिवेणु, निथ नेपि, बन्धुरयुग, वरूथ आदि हैं। सेनापति का रथ बहुत यत्न से सजाया जाता था वह स्वर्णमण्डित तथा रत्नजटित होता था–

'प्रतप्तजाम्बूनदजालसंवृत्तम् ।'[२९]

रथ में चार अश्व होते थे, आठ अश्वों से संयुक्त रथ का भी उल्लेख प्राप्त होता है–

ततोऽस्य ध्वजो केन चतुर्भिश्चतुरो हयान् ।[३०]

शीघ्रगति रथारोही योद्धा की सर्वोपरि आवश्यकता होती थी यह प्रमुखरूप से अश्वों की गति पर ही निर्भर थी–

'मनोजवैश्चाश्ववरैः सुयोजितम् ।[३१]

इसीप्रकार राक्षसों के वाहन रथ में खरों का प्रयोग होना वर्णित है–

रथं खरश्रेष्ठसहस्रसंयुतम् ।[३२]

तपस्या तथा यज्ञों के द्वारा भी सुन्दर रथों की उपलब्धि रामायण में प्राप्त होती है। अक्षकुमार को रथ की प्राप्ति इसीप्रकार हुई थी। इन्द्रजित् को उसकी आहुतियों से प्रसन्न होकर अग्निदेव ने सुन्दर रथ दिया था। इस रथ में चार सुदृढ़ और वेगवान् अश्व थे। यह रथ सभी प्रकार की साजसज्जाओं से विभूषित था, यह रथ अदृश्य रूप में संचरण करता था इस रथ की यही विशेषता थी, रथारोही योद्धा की युद्ध कुशलता युद्ध में उसकी कीर्ति तथा विजय रथ सञ्चालक की कुशलता पर निर्भर करती थी। सारथी की स्थिति युद्धकाल में सर्वदा विपत्तिमय होती थी, क्योंकि विपक्षी का अपने शत्रु के सारथी को मार देना सबसे पहला कार्य होता था जिससे रथारोही योद्धा विवश हो जाय। सारथी के अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य हुआ करते थे। वह रथ को सुसज्जित करके अपने स्वामी के सम्मुख ले जाता था जिससे उस पर आरूढ होकर योद्धा युद्धस्थल पर पहुँच कर प्रहार प्रारम्भ कर सके–

तस्य सूता रथं दिव्यं पंचनल्वप्रमाणतः।
युक्तं खरसहस्रेण युद्धध्वजविभूषितम् ।।
महाजलदनिर्घोषं कैलासशिखरोपमम् ।
अष्टचक्रं महावेगमुपनीय महारथाम् ।।[३३]

युद्धभूमि में सारथी को अपनी इच्छा से चलना वर्जित था उसे अपने स्वामी के निर्देश और उसकी इच्छा के अनुसार चलना होता था। अपने कर्तव्य के सुचारु निर्वाह के लिए सारथी को ऋतु और स्थान का पूरा ज्ञान अपेक्षित था। एक रथारूढ़ सारथी को यह जानना आवश्यक होता था कि कब उसे अपने रथ को शत्रु के रथ के

समीप ले जाना चाहिए, कब उससे दूर हटा लेना चाहिए, कब रुकना चाहिए, कब घूमना चाहिए।
राम रावण के युद्ध के समय रावण के सारथी ने देखा कि रावण के शस्त्र शत्रु पर ठीक तरह से नही पहुँच रहे हैं और राम के शस्त्रों की मार भीषण होती जा रही थी। अतः वह रावण के रथ को नगर की और लौटा ले गया। रावण के स्पष्टीकरण माँगने पर सारथी ने रथ को युद्ध भूमि से बाहर करने के कारणों का स्पष्टीकरण करते हुए अपने कार्य को उचित ठहराया।
अन्तिम राम रावण युद्ध में रथ संचालन का वाल्मीकि ने सूक्ष्म चित्रण अंकित किया है। कभी–कभी दोनों के रथों के अग्रभाग आपस में टकरा जाते थे कभी दोनों रथों के घोड़ों के मस्तक मिल जाते थे, कभी रथ बहुत दूर तक चक्कर लेकर पुनः आमने–सामने आ जाते थे।

गजसेना

सेना का दूसरा सबसे महत्त्पूर्ण अंग गज होते थे। अयोध्या में गजों का स्वतन्त्र प्रबन्धन था। भरत की चित्रकूट यात्रा के अवसर पर पूर्ण सुसज्जित दस सहस्र हाथी उनके साथ थे–

'दशनागसहस्राणि कल्पितानि यथाविधि[३४]

राम ने उन्नतदन्त वाले हाथियों के विषय में भरत से प्रश्न किया था–

'कच्चिदुन्नतदन्तानां कुञ्जराणां च तृप्यसे'[३५]

गजों का संग्रह करने के लिए राजा कभी–कभी जंगल भी जाता था –

'ग्रहीष्यत मे हस्तिनः किम् ?[३६]

वाल्मीकि ने हाथियों के पकड़ने की प्रक्रिया का भी विवरण दिया है कि कृत्रिम पात्र में घास एकत्रित करके किसी अन्य प्रशिक्षित गज की सहायता से हाथी को पकड़ना चाहिए।युद्ध के लिए गजों को नियमित रूप से प्रशिक्षित किया जाता था।हनुमान् ने लंका में शत्रु के हाथियों को पराजित करने की क्षमता वाले, शत्रु सेना को नष्ट कर देने वाले शत्रु के लिए अजेय हाथियों को देखा था।

अश्वेसना

अश्वबल सेना का प्रमुख अङ्ग था। रामायण में अश्वसेना को पदाति सेना की अपेक्षा कम महत्त्व प्राप्त था । सेना के अनिवार्य अङ्ग के रूप में स्वीकृत होने पर भी रामायण में वर्णित युद्धों में अश्वों के उपयोग का चित्रण न के बराबर है।
अश्वारोही सैनिक का प्रमुख कार्य रथारोही योद्धा का अनुगमन करना था। लंका के युद्ध में नरान्तक नामक राक्षस का प्रास हाथ में लेकर अश्वारूढ़ होकर युद्ध चित्रित है।

नौसेना

रामायण में केवल निषादराजगुह का ही ऐसा वर्णन है जो समृद्ध नौसेना का स्वामी था भरत के प्रति यह सन्देह करते हुए कि वह राम के विरुद्ध युद्ध के लिए आए हैं उसने पाँच सौ नावों को तैयार किया था।

युद्ध

रामायणकाल में राक्षस लोग रावण के नेतृत्व में लंका मे बस गए थे। वे धीरे–धीरे उत्तर की ओर बढ़ रहे थे। उन्होंने हैहय और वानरों से मित्रतापूर्ण सन्धि की, आगे बढ़कर जनस्थान में उन्होंने अपना एक गढ़ बना लिया था। अपनी रक्षा के लिए आर्यों को राक्षसों का प्रतिरोध करना आवश्यक हो गया था। राज्यविस्तार जो युद्ध का एक प्रमुख कारण है, रामायणकाल में उपस्थित था। इसलिए रामायण में सेना का संगठन, युद्धकला तथा युद्ध सम्बन्धी अनेक तथ्यों का परिचय उपलब्ध होता है।
प्राचीनकाल में वीरता का प्रदर्शन तथा भ्रमण का उत्साह राजाओं तथा सामन्तों को युद्ध के लिए प्रेरित करता था अपना सर्वाधिक महत्त्व स्थापित करने की प्रवृत्ति भी युद्धों के कारण होती थी। रामायण में दुन्दुभि नामक दैत्य तथा रावण की सामरिक यात्राएं अपने महत्त्व के प्रदर्शनार्थ हुई थीं।
प्राकृतिक उत्साह यात्रा की साहसिक प्रवृत्तियाँ की आन्तरिक प्रेरणा तथा राज्यों की सुन्दर कन्याओं का अपहरण, इन कारणों से भी युद्धों की स्थितियाँ उत्पन्न हो जाती थी। रामायण में वर्णित लंका के युद्ध का मुख्य कारण रावण के द्वारा सीता का अपहरण था–

दृष्ट्वा सीतां परामृष्टां दीनां दिव्येन चक्षुषा।
कृतं कार्यमिति श्रीमान् व्याजहार पितामहः।।[३७]

कन्या अपहरण के लिए अनेक राजाओं ने जनक पर आक्रमण किया, बालि के पतन का कारण अपने छोटे भाई की पत्नी के साथ उसका अनुचित सम्बन्ध था–

ततः परमकोपेन राजानो मुनिपुंगवः।
अरुन्धन्मिथिलां सर्वे वीर्यसन्देहमागता।।[३८]
तदेतत्कारणं पश्य यदर्थं त्वं मया हतः
भ्रातुर्वर्तसि भार्यायां त्यक्त्वा धर्मं सनातनम् । [३९]

युद्ध में सम्मिलित होने का एक कारण अपने मित्र की सहायता भी थी सुग्रीव ने रावण के विरुद्ध राम की सहायता की थी। मधु ने रावण की सहायता के लिए युद्ध में भाग लिया था –

प्रकृत्या राक्षसाः सर्वे मायया कूटयोधिनः।। [४०]

वाल्मीकि ने भूमि, हिरण्य, रजत तथा पशुओं को भी युद्ध का कारण कहा है–

तथा ब्रुवति शत्रुघ्ने राघवः पुनरब्रवीत् ।
एवं भवतु काकुत्स्थ क्रियतां मम शासनम् ।।[४१]

युद्धनीति

रामायण में राक्षसों को कूटयोधी तथा मायावी कहा गया है। कूट युद्ध का स्रोत वेदों में भी उपलब्ध होता है। अथर्ववेद में अश्वत्थ आदि के प्रयोगों से शत्रुओं पर विजय प्राप्त होने के उपाय वर्णित हैं। दशरथ ने विश्वामित्र से मायावी राक्षसों से युद्ध करने में राम की असमर्थता बतलाई थी, क्योंकि राक्षस कूटयोद्धा थे –

'कूटयुद्धाः हि राक्षसाः।'[४२]

राक्षसों में रावण और उसका पुत्र मेघनाद कूट युद्ध की कला में अत्यधिक निपुणता रखते थे यक्षों के साथ हुए युद्ध में रावण ने सहस्रों आकृतियाँ बनाते हुए युद्ध किया था । वह सिंह, वृक्ष, मेघ, पर्वत, समुद्र आदि का आकार धारण करता था और अपनी यथार्थ आकृति में कभी पहचान में नहीं आता था–

व्याघ्रो वराहो जीमूतः पर्वतः सागरो दृभः।

यक्षो दैत्यस्वरूपी च सोऽदृश्यत दशाननः।। [४३]

राक्षसों में विद्युज्जिह्व भी मायायुद्ध में निपुण था उसने राम का मिथ्या मस्तक और धनुष बनाया था, जिसे देखकर सीता को राम के मारे जाने का सन्देह हुआ था। इसप्रकार के युद्ध के प्रवर्तकों का यह विश्वास था कि युद्धकाल में शत्रु को हानि पहुँचाने वाले सभी उपाय काम में लिए जा सकते हैं।
राम के पक्ष से सुग्रीव ने मन्दोदरी को रावण की मन्त्र साधना के समय कष्ट पहुँचाया था। तथा रात्रि में लंका में अग्निबाणों की वर्षा की थी।
रामायण का घटनाचक्र राजनैतिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण और जटिलता से युक्त प्रतीत होता है। रामचन्द्र का वनवास कोई सामान्य या आकस्मिक घटना हो, ऐसा नहीं है। इस घटना का उत्तरदायित्व सामान्यतः कैकेयी और मन्थरा पर डाला जाता है, परन्तु वाल्मीकि रामायण इसका उत्तरदायी स्वयं महाराज दशरथ को ठहराती है।
दशरथ एक पराक्रमी राजा थे परन्तु वे कामी पुरुष के रूप में भी चित्रित हैं–

स वृद्धस्तरुणीं भार्यां प्राणेभ्योऽपि गरीयसाम्
कामी कमलपत्राक्षीमुवाच वनितामिति।।

उनकी सैकड़ों रानियाँ थीं जिनमें कौसल्या, सुमित्रा, कैकेयी ये तीन पटरानियाँ थी कैकेयी से दशरथ का विवाह उनकी ढलती उम्र में हुआ था। दशरथ जब वृद्ध हो चुके थे तब कैकेयी तरुणी थी।
कैकयराज ने दशरथ से अपनी पुत्री के पुत्र को राज्य देने की शर्त निश्चित करने के उपरान्त उसके क्रियान्वयन में कोई गड़बड़ी न हो इसका भी अपनी ओर से प्रबन्ध किया था जो कि राजनैतिक दृष्टि से स्वाभाविक भी था। कैकेयी ने विवाह के उपरान्त अपने आकर्षण से दशरथ को आबद्ध किया था, जो कि स्वाभाविक ही था। वे प्रायःसामान्य यात्राओं तथा युद्ध यात्राओं में भी कैकेयी को साथ रखते थे ऐसी ही एक युद्ध यात्रा में दशरथ को कैकेयी ने भारी विपत्ति से बचाया था जिससे प्रसन्न होकर राजा ने कैकेयी को वरदान देने का वचन दिया था कैकेयी ने यथासमय कभी भी माँग लेने के लिए सुरक्षित कर लिया–

देवासुरे च संग्रामे जनन्यं तव पार्थिवः
सम्प्रहृष्टौ ददौ राजा वरमाराधितरू प्रभुः।।[४४]

वाल्मीकि के अनुसार राम के समान गुणवाला पुरुष संसार में कोई दूसरा नहीं था और न होना सम्भव था। दशरथ उनके आज्ञापालन और पितृभक्ति से अभिभूत थे। पूरे राज्य में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जो राम का पूर्णतया प्रशंसक न हो स्वयं कैकेयी भी भरत और राम में कोई अन्तर नहीं समझती थीं क्योंकि अपनी सभी माताओं के प्रति राम की समान श्रद्धा और आदरभाव था।

'रामे वा भरते वाहं विशेषं नोपलक्षये। [४५]

अपने सब भाइयों में ज्येष्ठ होने के कारण राम ही दशरथ के पश्चात् राजा होने के अधिकारी थे दशरथ के वृद्ध होने पर उनके जीवनकाल में ही युवराज पद का भी प्रावधान था इसको दशरथ पूर्ण करना चाहते थे।

अथ राज्ञो बभूवैव वृद्धस्य चिरजीविनः।
प्रीतिरेषा कथं रामो राजा स्यान्मयि जीवति।।[४६]

राज्य संस्था

राजा या सम्राट् को ही राज्य संस्था के प्रतीक के रूप में माना जाता था रामायण में राजा के प्रारम्भिक स्वरूप को उक्त दैवीशक्ति की सहायता के रूप में भी चित्रण किया गया है। रामायण के उत्तरकाण्ड में ऐसा कहा गया है कि सत्ययुग में कोई भी राजा नहीं था। देवताओं में शतक्रतु राजा था। मनुष्यों ने ब्रह्मा से देवताओं की ही तरह एक राजा प्रदान करने की प्रार्थना की, जिस पर वे अवलम्बित रह सकें और पापमुक्त हो सकें। रामायण में जो राज्यसंस्था वर्णित है, उसमें परम्परागत राजा की प्रधानता है। राज्यों की एक राजधानी होती थी जिसे 'पुर' कहा जाता था राज्य में अन्य नगर होते थे, नगर के आस–पास अनेक ग्राम तथा घोष होते थे।
राज्य के विभिन्न अङ्गों का वर्णन रामायण में प्राप्त होता है। किष्किन्धाकाण्ड में सभी राज्यतत्वों का एकत्र उल्लेख है–

यस्य दण्डश्च कोशश्च मित्राण्यात्मा पुरं जनः।
पूर्णान्येतानि सर्वाणि स राज्यफलमश्नुते ।। [४७]

राजा के गुणों की चर्चा राज्याङ्गों के साथ ही है। वाल्मीकि के अनुसार राजा और प्रजा में परस्पर पिता–पुत्र का सा सम्बम्ध होना चाहिए–

राजमूलो हि धर्मश्च ज्यश्च जयतांवर।
तस्मात् सर्वास्ववस्थासु रक्षितव्यो नराधिपः।।[४८]

रामायण के अनुसार राजा के अभाव में प्रजा में असुरक्षा की भावना पैदा हो जाती है,धार्मिक, आर्थिक स्थितियाँ शोचनीय हो जाती हैं । साररूप में यह कह सकते हैं कि राजा के आभाव में सब ओर जङ्गल जैसा हो जाता है। निर्बल और धनहीन,सबल व्यक्तियों के द्वारा आक्रान्त किये जाते हैं–

मत्स्या इव नरा नित्यं भक्षयन्ति परस्परम् ।[४९]

राजा
वाल्मीकिरामायण में राजतन्त्र के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार के शासन रूप की सूचना उपलब्ध नहीं होती। राजा को सैन्यबल के अधिपति के गुणों से शोभित होना अत्यावश्यक था। क्रोधित होने पर वह देवताओं से भी युद्ध कर सके ऐसी स्थिति आदर्श राजा को मान्य थी –

'कस्य बिभ्यति देवाश्च जातरोषस्य संयुगे।[५०]

रामायणकाल में समाज में वर्णव्यवस्था पूर्णरूप से प्रतिष्ठित थी। रामायण के सन्दर्भों सें स्पष्ट है कि राजा अपनी दैवी शक्ति में विश्वास करता था । राम बाली से कहते हैं कि राजा पृथ्वी पर दैवी शक्ति के रूप में अवतीर्ण है उसका अपमान या उस पर आघात नहीं किया जा सकता–

दुर्बलस्य च धर्मस्य जीवितस्य शुभस्य च
राजानो वानरश्रेष्ठ प्रदातारो न संशयः
तान्न हिंस्यान्नचाक्रोशेन्नक्षिपेन्नाप्रियं वदेत्
देवा मानुषरूपेण सन्त्येवैते महीतले ।। [५१]

सभी क्षेत्रों में प्रजा राजा से अनुकरणीय तथा आदर्श व्यवहार की अपेक्षा रखती थी क्योंकि प्रजा राजा के व्यवहार को आदर्श मानकर उनका अनुकरण करती थी, रामायण में राजा के अधिकारों की

उतनी चर्चा नहीं है जितना की उसके कर्तव्यों पर बल दिया गया है।

राज्याभिषेक

रामायण में राज्याभिषेक का वर्णन अनेक स्थानों पर वर्णित है जैसे – अयोध्याकाण्ड में राम का राज्याभिषेक, किष्किन्धाकाण्ड में सुग्रीव का राज्याभिषेक लंका पर आक्रामण से पूर्व रावण को छोड़कर आए हुए विभीषण के राज्याभिषेक का वर्णन प्राप्त होता है–

प्रविश्य त्वभिनिष्क्रान्तं सुग्रीवं वानरर्षभ।
अभिषिञ्चन्त सुहृदः सहस्राक्षमिवामराः ।। ५२
इति ब्रुवाणं तं रामः परिष्वज्य विभीषणम् ।
उवाच लक्ष्मणं वीरं समुद्राज्जलमानय।।५३

वनवासोपरान्त राम के राज्याभिषेक का वर्णन इसप्रकार प्राप्त होता है–

सर्वमेवाभिषेकार्थं जयार्हस्य महात्मनः।
कर्तुमर्हथ रामस्य यावन्मङ्गलपूर्वकम् ।।५४

अभिषेक के अनन्तर युवराज का नगर परिभ्रमण होता था । भव्य शोभायात्रा में प्रमुख शासनाधिकारी तथा नागरिकगण सम्मिलित होते थे। वह सुसज्जित रथ में भद्रासन पर आसीन होता था, उस पर पूर्णचन्द्र के समान आभा वाला श्वेत छत्र सुशोभित होता था।

मन्त्रिपरिषद्

रामायण में राजा के साथ ही मन्त्री का भी बहुत महत्त्व स्वीकार किया गया है। मन्त्री को राजा का सहायक, सुहृद्,स्वजन बताया गया है जहाँ स्वार्थी राजा मन्त्रियों से परामर्श किए बिना राज्य कार्य करता है वह राज्य पूर्णरूपेण नष्ट हो जाता है। राज्य कार्य में राजा की साक्षात् सहायता करने वालों के लिए रामायण में अमात्य, सचिव तथा मन्त्री शब्द का प्रयोग प्राप्त होता है। अमात्य शब्द ऋग्वेद में भी प्राप्त होता है। ऐतरेय ब्राह्मण में भी सचिव शब्द का प्रयोग है–

यत्र नेता च गुणवान् सहायाश्च गुणान्विताः ।
तत्र धर्मार्थकामानां भवेत् सम्यक् परीक्षणम् ।। ५५
निवार्यमाणं बहुशः सुहृद्भिरनिवर्तिनम् । ५६
त्वद्विधः कामवृत्तो हि दुःशीलः पापमन्त्रितः।
आत्मानं स्वजनं राष्ट्रं स राजा हन्ति दुर्मतिः।।५७

अनेक स्थलों पर इन शब्दों का प्रयोग बारी–बारी से एक ही व्यक्ति के लिए होने के कारण ये शब्द समानार्थक थे ऐसा आपाततः प्रतीत होता है सुमन्त्र को एक स्थान पर अमात्य, दूसरे स्थान पर मन्त्री तथा अन्यत्र सचिव कहा गया है।

धृष्टि, जयन्त, विजय,सिद्धार्थ, अशोक,धर्मपाल,सुमन्त्र ये दशरथ के सहायक मण्डल के अमात्य कहे गये हैं, इसके अतिरिक्त वसिष्ठ,वामदेव, जाबालि,काश्यप,मार्कण्डेय, गौतम तथा कात्यायन को मन्त्री कहा गया है–

धृष्टिर्जयन्तो विजयः सिद्धार्थः श्रमसाधकः।
अशोको मन्त्रपालश्च सुमन्त्रश्चाष्टमोऽभवत् ।। ५८

रामायणकाल में धार्मिक क्रियाकलापों का बहुत अधिक महत्त्व था। पुरोहित उस कार्य के लिए अधिकृत था। वह मन्त्रिपरिषद् का प्रधान सदस्य था उसे उपाध्याय पद से विभूषित किया जाता था । अयोध्या में वसिष्ठ पुरोहित पद पर प्रतिष्ठित थे, वे ब्रह्मर्षि थे तथा वेदमन्त्रों के द्रष्टा तथा पूर्ण ज्ञाता थे। दशरथ के जीवनकाल में तथा उनके उपरान्त भी वसिष्ठ का राजनैतिक क्षेत्र में भी सर्वाधिक महत्त्व था महामात्य का पद यद्यपि सिद्धार्थ को प्राप्त था परन्तु वसिष्ठ प्रधानमन्त्री के प्रभाव से विभूषित हुए हैं। वसिष्ठ का राजा तथा मन्त्रियों पर पूर्ण प्रभाव था राजा को वसिष्ठ वशवर्ती कहा गया है–

'महावंशप्रसूतस्य वसिष्ठव्यपदेशिनः'५९

राज्य की न्यायसभा में जब राजा प्रधानपीठ पर आसीन होता था, तब वसिष्ठ का आसन राजा के साथ ही हुआ करता था राम ने ब्राह्मण बालक की अकाल मृत्यु के समय अन्य द्विजों तथा आमात्यों के साथ ही वसिष्ठ का निर्देश भी प्राप्त किया –

ततो द्विजा वसिष्ठेन सार्धमष्टौ प्रवेशिताः । ६०

सुरक्षा विभाग

सुरक्षा विभाग शासन का एक महत्त्वपूर्ण विभाग था, यह सेनापति के अधिकार में था सेनापति राज्य की सेना का सर्वोच्च व्यक्ति था। वह संग्राम तथा सेना संचालन विद्या का पूर्ण पण्डित होता था।

अर्थ का महत्त्वपूर्ण विभाग सचिव मण्डल के सदस्य कोषाध्यक्ष के अधिकार में होता था। दशरथ के मन्त्रिमण्डल में अर्थसाधक नाम का मन्त्री सम्भवतः कोषाध्यक्ष के पद पर विभूषित था जब राज्य पर आर्थिक संकट उपस्थित होता था तब केवल कोषाध्यक्ष ही अपनी वित्तीय सूझ–बूझ से राजा को समुचित परामर्श देने में समर्थ होता था । कोषाध्यक्ष के साथ धनाध्यक्ष आदि अन्य पद भी थे जिनका प्रधान कार्य विभिन्न स्वीकृत साधनों से कोष का संचय करना होता था ।

न्याय विभाग

सम्भवतः न्यायविभाग दशरथ के मन्त्रिमण्डल में धर्मपाल के अधिकार में था । प्राचीन भारतीय राज्यव्यवस्था में राजा या राज्याधिकारियों को नया नियम या कानून बनाने का अधिकार प्राप्त नहीं था ।

विदेशविभाग

इस विभाग का कार्य सम्भवतः राजा को अपने गुप्तचरों की सूचनाओं के आधार पर मित्र, शत्रु तथा उदासीन राजाओं की योजनाओं की सूचना देना होता था। सुग्रीव के प्रधान सहायक मन्त्री हनुमान् तथा युवराज अंगद उसके लिए गुप्तचर का कार्य करते थे।

'अहं सुग्रीवसन्देशादिह प्राप्तस्तवालयम्'

युवराज

कार्यपरिषद् में युवराज भी एक महत्त्वपूर्ण पद था। युवराज राज्य के महत्त्वपूर्ण कार्यों में सहयोग देता था राम जब युवराज नहीं थे तब भी भावी युवराज समझे जाने के कारण राज्य के अभियान आदि कार्यों का सम्पादन करते थे। सीता के अन्वेषणार्थ दक्षिण दिशा में भेजे गए वानर समूह का नेता अंगद को नियुक्त किया गया था। किसी नवीन विचार–विमर्श में मन्त्री का सहयोग आवश्यक था। रावण ने प्रहस्त के साथ नवीन घटनाचक्र पर परामर्श किया था–

प्रहस्तस्तु दशग्रीवं गत्वा सर्वन्यवेदयत।६१

दूत से मिलते समय भी मन्त्री उपस्थित रहते थे । हनुमान् से रावण अपने मन्त्रियों के साथ मिला था–

दुर्धरेण प्रहस्तेन महापार्श्वेन रक्षसा।
मन्त्रिभिर्मन्त्रतत्त्वज्ञैर्निकुम्भेन च मन्त्रिणा।[६२]

जब राजकुमार का राज्यारोहण होता था तब भी मन्त्रीगण वहाँ उपस्थित रहते थे राजा की शवयात्रा में मन्त्रीगण उपस्थित बताए गए हैं। दशरथ, बाली तथा रावण की अन्त्येष्टि में वहाँ के मन्त्री उपस्थित थे।
अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ रखना अमात्य का उत्तरदायित्व था किसी चोर को उसकी चुराई हुई वस्तु के साथ पकड़ने पर उसे छोड़ना उचित नहीं समझा जाता था। निर्दोष व्यक्ति को किसी के कहने पर चोर समझ कर दण्डित किया जाना भी अनुचित था–

यानि मिथ्याऽभिशस्तानां पतन्त्यस्राणि राघव।
तानि पुत्रपशून्हनन्ति प्रीत्यर्थमनुशासतः।।[६३]

अवसर आने पर मन्त्रीगण दूत, राजदूत का भी कार्य करते थे। हनुमान् ने रावण की सभा में उपस्थित होकर सुग्रीव के दूत का कार्य सम्पन्न किया था।
राज्य का शासन उच्चाधिकारियों द्वारा संचालित होता था, जिन्हें तीर्थ कहा जाता था। वाल्मीकि के अनुसार इन उच्चाधिकारियों की संख्या अठारह होती थी –

कच्चिदष्टादशान्येषु स्वपक्षे दशपञ्च च।
त्रिभिस्त्रिभिरविज्ञातैर्वेत्सि तीर्थानि चारकैः।।[६४]

तिलक टीका में इनका उल्लेख निम्न रूप से प्राप्त होता है–मन्त्री, पुरोहित, युवराज, सेनापति, दौवारिक अन्तःपुराधिकृत, बन्धनागाराधिकृत, थानाध्यक्ष, राजाज्ञा का वक्ता, प्राड्विवाक, धर्मासनाधिकृत, सभ्य अथवा व्यवहार निर्णेता, सेना का भृतिदानाध्यक्ष, कर्मान्त, वेतनग्राही नगराध्यक्ष, राष्ट्रन्तपाल, दुष्टदण्डनाधिकारी,जलगिरिवनदुर्गस्थल पाल। सुग्रीव ने अपने अन्तपालों को एक सप्ताह में अपने अनुचरों के साथ राजधानी में एकत्रित होने का आदेश दिया था। अन्तपालकों को 'आरक्ष' भी कहा जाता था–

आरक्षो मे हस्तात्'[६५]

न्याय व्यवस्था

शासन के लिए न्याय व्यवस्था को सुदृढ़ रखना सर्वदा अनिवार्य रहा है चाहे कितना ही सभ्य समाज हो और चाहे कितना ही आत्मनियन्त्रित हो परन्तु मानव सर्वदा अपनी अपूर्णता तथा त्रुटियों से आक्रान्त रहा है समय समय पर ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती रही हैं जिन्हें विचारपूर्वक हल करने की आवश्यकता का कभी निषेध नहीं किया जा सकता । परिस्थितिवश समाज कहीं जंगली न बन जाये सबल तथा सम्पन्न लोग निर्बल तथा धनहीनों को न सताने पायें ऐसी व्यवस्था राज्य संस्था को रखनी होती है उसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि कुछ ऐसे आधार हों जो विवादास्पद अप्रत्याशित विषयों पर विचार के समय सबके लिए समान हो प्राचीन भारत में इसप्रकार की व्यवस्था का भार राजा पर ही था।

मित्रराज्य

प्राचीन भारत में राज्यों की संख्या अधिक थी। स्वभावतः प्रत्येक राज्य अपनी शक्ति और प्रभाव के बढ़ाने के लिए अभिलाषी या अपनी शक्ति को यथावत् रखने के लिए प्रयत्नशील रहते थे। उस स्थिति में राज्यों का पारस्परिक सम्बन्ध महत्त्व की बात थी। रामायण के अनुसार विजिगीषु, मित्र, अमित्र, मध्यस्थ, और उदासीन राजा होते थे –

विचरन्ति महीपाला यात्रार्थविजिगीषवः
कच्चिद् बले च कोषे च मित्रेषु च परन्तप
कुशलं ते नरव्याघ्र पुत्रपौत्रैस्तथानघ।।[६६]

मित्र राजा राज्य का प्रमुख स्तम्भ माना जाता था राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित करना शक्ति सन्तुलन तथा निष्पक्ष भाव के लिए भी उसे आवश्यक माना जाता था। शासन अपनी स्थिति की दृढ़ता के लिए सहायकों से मित्रता बढ़ाने का अभिलाषी रहता था। अयोध्या में राज्याभिषेक के अवसर पर अनेक मित्र राजाओं की उपस्थिति का उल्लेख प्राप्त होता है–

प्राच्योदीच्याः प्रतीच्याश्च दाक्षिणात्याश्च भूमिपाः
मलेच्छाश्चान्यो च बहवः पार्वतीयाश्च संगताः।।[६७]

युद्ध के समय भी मित्र राजा अयोध्या में उपस्थित हुए थे अर्थात् स्वतन्त्र राज्य भी उस समय थे, जिनके नीति, कोष आदि पर अन्य राजा का अधिकार होता था–

येषां चाराश्च कोशश्च नयश्च जयतांवर
अस्वाधीनां नरेन्द्राणां प्राकृतैस्ते जनैः समाः।।[६८]

रामायण में साम और दाम के उपायों के प्रयोग का उल्लेख भी है परन्तु भेद और दण्ड के उपाय अपनी पूरी प्रखरता और वैशिष्ट्य के साथ प्रयोग में लाये गये थे।
भेदनीति का प्रयोग रामायणकाल में पर्याप्त रूप में होता था गुप्तचरों के द्वारा शत्रुपक्ष के प्रधान पुरुषों को अपनी ओर सम्मिलित करना उस काल में अव्यावहारिक नहीं था। रावण के प्रमुख मन्त्री माल्यवान् ने जब रावण को राम के विरुद्ध कहने से रोकना चाहा तो रावण ने उस पर शत्रुपक्ष से मिले होने का सन्देह किया–

वीरद्वेषेण वा शत्रुः पक्षपातेन वा रिपोः।
त्वयाहं परुषाण्युक्तः परप्रोत्साहनेन वा ।।[६९]

सीता के अन्वेषण के समय अंगद की ऐसी ही उक्ति पर हनुमान् ने अंगद को सावधान किया। दण्ड का प्रयोग उसी समय करना उपयुक्त समझा जाता था जब पहले के तीन उपाय व्यर्थ हो जाते थे मन्दोदरी ने रावण से कहा कि राजाओं को अपने व्यवहार में साम, दाम, भेद का ही आश्रय लेना चाहिए अन्तिम उपाय दण्ड या युद्ध अशुचि है, अतः इसका परित्याग किया जाना उचित है।
रामायण में षाड्गुण्य का विवरण प्राप्त होता है सन्धि, विग्रह,शासन, यान, समाश्रय और द्वैधीभाव ये षाड्गुण्य हैं–

'षड्गुण्यस्य पदं वेत्ता नीतिकर्ता च राघवः।'[७०]

कोई राजा अन्य राजाओं के साथ उपर्युक्त छह प्रकारों से व्यवहार करता था । जब शत्रु अपने से प्रबल या समान हो तब सन्धि से कार्य लेना होता था–

हीयमानेन कर्तव्यो राज्ञा सन्धिः समेन च।
न शत्रुमवमन्येत ज्यायान् कुर्वीत विग्रहम्।।

उत्तरकाण्ड में बाली और रावण की सन्धि का वर्णन है जिसके अनुसार दोनों एक दूसरे के साधनों का स्वच्छन्द रूप से उपयोग कर सकते थे यान, विग्रह और सेना अभियान युद्ध के काम में लायी जाने वाली नीतियाँ थी। स्वयं जो राजा अधिक शक्तिशाली होता था वही अपने से दुर्बल अन्य राजा के प्रति इनका उपयोग करता था।

वाल्मीकि ने राम के वानरों के साथ मित्रता, उनकी सेना को साथ लेकर अपने शत्रु रावण पर आक्रमण, उसके विनाश की घटना को चित्रित करके उक्त यान और विग्रह नामक उपयों का सफल चित्रण किया है। रावण अपने गुप्तचरों को राम की सेना में प्रविष्ट होकर द्वैधीभाव की नीति का प्रयोग करने की आज्ञा दी थी।

राजा को अपने नीतिमार्ग का निर्धारण करते समय लौकिक तथा पारलौकिक दोनों परिणामों को ध्यान में रखना होता था क्योंकि पारलौकिक परिणाम प्रत्यक्ष नहीं थे तथा मानवीय शक्ति की सीमा से बाहर थे अतः लौकिक परिणामों को दृढ़ करना उसके लिए आवश्यक था प्रत्येक परिस्थिति में कार्य परिचालन करते हुये राजा को अपनी स्थिति, शत्रु की स्थिति, समय और समय और स्थान का भी विचार करना पड़ता था–

स्वशक्तिं परशक्तिं च देशकालौ च तत्वतः।
समीक्ष्यारभते कर्म यः स बुद्धिमतां वरः।।[७१]

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि रामायणकालीन रक्षा व्यवस्था में सेना, गुप्तचर, अमात्य तथा राजा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती थी इसी क्रम में दुर्ग भी सुरक्षा की दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण थे जिसमें रहते हुये राजा अपने मन्त्रिमण्डल के साथ शत्रु के विरुद्ध की गतिविधियों की जानकारी प्राप्त कर उस पर विचार – विमर्श करता था।

सन्दर्भ

1. वा.रा.–2.31.9
2. वा.रा. 6.20.19
3. वा.रा.– 6.31.49
4. वा.रा.–3.52.26
5. वा.रा.– 6.16.13
6. वा.रा.–6.20.22
7. वा.रा.–4.43.5
8. वा.रा.–7.5.24
9. वा.रा.–1.94.34–35
10. वा.रा.–5.70.26
11. वा.रा.– 1.15.10–13
12. वा.रा.– 5.100.31
13. वा.रा.– 1.65.22
14. वा.रा.–1.19.9
15. वा.रा.–1.53.12
16. वा.रा.–2.31.09
17. वा.रा.–2.74.1–4
18. वा.रा.–2.31.35
19. वा.रा.–5.42.39
20. वा.रा.–6.34.49
21. वा.रा.–1.1.34
22. वा.रा.–6.31.19
23. वा.रा.–6.45.24
24. वा.रा.–1.77.1–5
25. वा.रा.–6.11.19
26. वा.रा.–3.21.7
27. वा.रा.–3.22.18
28. वा.रा.– 5.61.3
29. वा.रा.–3.27.14
30. वा.रा.–3.2.55
31. वा.रा.–5.43.4
32. वा.रा.– 6.56.7
33. वा.रा.–6.53.24–25
34. वा.रा.–1.77.3
35. वा.रा.–2.94.43
36. वा.रा.– 2.78.4
37. वा.रा.–3.50.10
38. वा.रा.–3.50.10
39. वा.रा.–4.18.18
40. वा.रा.– 6.40.53
41. वा.रा.–7.54.15
42. वा.रा.–1.18.6
43. वा.रा.– 7.15.26
44. वा.रा.– 2.107.4
45. वा.रा.–2.7.35
46. वा.रा.–2.1.36
47. वा.रा.–4.22.11
48. वा.रा.–2.39.10
49. वा.रा.–2.61.21
50. वा.रा.–1.1.4
51. वा.रा.–4.18.37–38
52. वा.रा.–4.25.20
53. वा.रा.–4.94.1
54. वा.रा.–6.116.22
55. वा.रा.–5.89.15
56. वा.रा.–6.80.40
57. वा.रा.–3.35.7
58. वा.रा.– 1.7.3
59. वा.रा.–1.18.2
60. वा.रा.–7.65.3
61. वा.रा.–7.11.48
62. वा.रा.–5.45.11–12
63. वा.रा.– 2.4.50
64. वा.रा.–2.94.30
65. वा.रा.– 3.31.4
66. वा.रा.– 1.51.9
67. वा.रा.–2.3.3.36
68. वा.रा.–6.33.8
69. वा.रा.–6.27.6
70. वा.रा.–7.61.22
71. वा.रा.– 5.81.3